गुरुकुल शिक्षा एवं वर्तमान शिक्षा

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़

पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

शिक्षा मानव जीवन का निर्माण करती है जिसको जैसी शिक्षा दी जाती है उसके जीवन का निर्माण भी वैसा ही हो जाता है। शिक्षा ही ज्ञान चक्षु को खोलती है। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली भारत की प्राचीन शिक्षा प्रणाली थी। यह व्यवस्था बहुत ही वैज्ञानिक रीति पर आधारित थी। मानव जीवन की आयु सौ वर्ष मानकर पच्चीस–पच्चीस वर्षों में विभक्त कर दी गयी थी। इसे ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास आश्रमों में बांट दिया गया था।

प्रथम आश्रम ब्रह्मचर्य आश्रम कहलाता है। इस आश्रम में शिष्य गुरू के सान्निध्य में जाकर के शिक्षा प्राप्त करता था। भारतीय शास्त्रों में कहा गया है कि ज्ञान अथवा विद्या से मुक्ति प्राप्त होती है। समाज में दो प्रकार के लोग होते है। एक तो वे लोग जो प्रत्येक कार्य समझकर बुद्धि से करते है और दूसरे वे लोग जो बिना समझे कार्य करते है जो कर्म समझ कर किया जाता है। वही कर्म शक्तिशाली तथा सफल होता है।

मनु के अनुसार जन्म से सभी मनुष्य शूद्र उत्पन्न होते है परन्तु आध्यात्मिक ज्ञान और कर्म से वे द्विज बन जाते है। शिक्षा मानव का सर्वांगीण विकास करती है। गुरु के आश्रम में शिष्य बौद्धिक और मानसिक अनुशासन सिखताह है। मानव का जीवन ज्ञान से ही धर्म प्रवण, नैतिक मूल्यों से युक्त, उच्च आदर्शों से संवलित और बहुमुखी व्यक्तित्व से युक्त होता है। अतः धार्मिक वृत्तियों का उत्थान, चरित्र का उत्थान, व्यक्तित्व का उत्थान, सामाजिक उत्तरदायित्वों का निष्पादन और सांस्कृतिक जीवन का उत्थान शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली इस उद्देश्य को सफल करने में पूर्ण समर्थ थी। प्राचीनकाल में मौखिक अध्यापन प्रचलित था। विद्यार्थी गुरु के सान्निध्य में रहकर शिक्षार्जन करता था। गुरु का बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान था।

प्राचीनकाल में गुरु और शिष्य का संबंध पिता और पुत्र जैसा था इसलिए शिष्य का यह कर्त्तव्य था कि वह गुरु के प्रति द्रोह न करे। शिष्य अथवा विद्यार्थी के लिए विद्यार्जन के प्रति

निष्ठावान तथा जिज्ञासु होना आवश्यक था। गुरू उसकी जिज्ञासु प्रवृत्ति और कर्त्तव्य बुद्धि की जानकारी रखता था। प्रतिभावान और सुयोग्य शिष्य को चुनना गुरू की कुशलता का परिचायक था। गुरू की यह विशेष कुशलता होती थी कि वह मंद बुद्धि छात्र के मस्तिष्क में ज्ञान का मंत्र फूंककर उसे विद्या सम्पन्न बना दे।

गुरुकुल आश्रम में शिष्य को सात्विक प्रवृत्ति से रहना पड़ता था। शिष्य का यह कर्त्तव्य था कि वह असत्य भाषण न करे, प्रतिदिन स्नान करे, मधुमांस का सेवन न करे, दिन शयन तेल मर्दन, क्रोध, लालच, मोह इत्यादि न करे। उसको अनेक आचार संबंधि नियम भी पालन करने पड़ते थे। शिष्य को गुरु के साथ जाना चाहिए, उसे स्नान करने में सहायता देनी चाहिए, उसके शरीर को दबाना चाहिए, गुरू को प्रसन्न करने वाले कार्य करने चाहिए, अपने पेरों को आगे कर गुरु के समीप नहीं बैठना चाहिए, अपने पाव नहीं फैलाना चाहिए, उच्च स्वर से गुरु के सामने बोलना नहीं चाहिए, जोर से हंसना, जँभाई लेना, अंगुली चटकाना नहीं चाहिए, बुलाने पर तुरंत गुरु के पास जाना चाहिए, गुरु के सामने नीचे आसन पर बैठना चाहिए, गुरु के सो जाने के उपरान्त सोना और उनके जगने के पहले जगना चाहिए, शिष्य को अपने गुरु की चाल–ढ़ाल वाणी एवं क्रियाओं की नकल नहीं करनी चाहिए।

गुरुकुल में विद्यार्थियों के साथ समानता का व्यवहार होता था। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य बालक समान रूप से शिक्षा ग्रहण करते थे। विद्यार्थियों के मध्य धनी और निर्धन की भावना के लिए भी स्थान नहीं था। सभी ब्रह्मचारियों को चाहे वे राजकुल में उत्पन्न हो अथवा अत्यंत निर्धनकुल में उत्पन्न हो। समान रूप से अध्यवसायी होना पड़ता था। शिक्षार्थी को ब्रह्मचर्य व्रत का पालन अनिवार्य रूप से करना पड़ता था। इन्द्रिय निग्रह के लिए ब्रह्मचारी, अश्लीलता आदि से सवर्था दूर रहता था। मृदु स्वभाव तथा पर दुःख कातरता की अभिवृद्धि आदि के लिए उसे प्राणीवध से सर्वथा दूर रहकर अहिंसा व्रत का पालन करना पड़ता था। ब्रह्मचारी की वेशभूषा मृगचर्म, यज्ञोपवीतमेखला तथा पलाश दंड मात्र ही थी। उन्हें भावी जीवन कष्ट सहिष्णु बनने के लिए आवश्यक था कि ब्रह्मचर्य आश्रम में रहकर वह हर प्रकार की परिस्थितियों का सामना करें। जीवन निर्वाह के लिए ब्रह्मचर्य आश्रम में जीवन निर्वाह के लिए भिक्षावृत्ति ही एकमात्र साधन था। यह विधान विद्यार्थी को कष्टसहिष्णु और निरहंकार बनाने के लिए था।

उसे भिक्षावृत्ति के लिए एक ही घर से पूर्ण भिक्षा ग्रहण करने का निषेध था। भिक्षा में भी अधिक मात्रा मे लाकर संचित करने का निषेध था।

ब्रह्मचारी के इस प्रकार के जीवन को देखकर यह कहा गया है कि सुखार्थी को विद्या कहाँ तथा विद्यार्थी को सुख कहाँ। गुरूकुल आश्रम में विद्यार्थियो को सभी विषयों की शिक्षा दी जाती थी। प्राचीन शिक्षा प्रणाली आज की शिक्षा प्रणाली से पूरी तरह भिन्न थी। आजकल की तरह शिक्षा के लिए ऊंची–ऊंची अट्टालिकाओं का निर्माण कर विद्यार्थी को आकर्षित नहीं किया जाता था। वृक्षों के नीचे बैठकर शिक्षार्थी विद्याध्ययन करते थे और जीवन का निर्माण करते थे जो उनके भावी जीवन में काम आती थी। विद्यार्थी को शिक्षा की समाप्ति के बाद भी अपने ज्ञान को बनाये रखना पड़ता था।